Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)
UGC Approved Sr.No.64259
Vol - IV Issue-X OCTOBER 2017 ISSN 2349-638x Impact Factor 3.025

कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में नारी चेतना : संवेदना एवं स्वरूप

डॉ. बालाजी श्रीपती भुरे
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
शिवजागृती वरिष्ठ महाविद्यालय,
नलेगांव ता. चाकुर जि. लातूर ।

मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज में रहकर अपना तथा समाज का विकास करता है। उसकी इस विकास यात्रा में नारी का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इस दृष्टि से नारी के बिना पुरूष अधूरा है और पुरूष के बिना नारी अधूरी है। यह जानते हुए भी भारतीय पुरूषप्रधान संस्कृति में पुरूषों ने हमेशा अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए स्त्री व्यक्तित्त्व को अपने अधिकारोंतले कुचल रखा है। वह हमेशा स्त्री संवेदना और उसकी चेतना को खण्डित करता रहा ताकि वह अपने खिलाफ न सोचे, न विरोध प्रदर्शित करें।

सोचने की क्षमता का नाम ही चेतना है जिसे हम बुध्दि भी कह सकते हैं। संवेदना से अच्छे-बुरे का न्याय-अन्याय का बोध होता है और चेतना उस बोध या अनुभूति को क्रियाशील बनाने का काम करती है। इस दृष्टि से संवेदना और चेतना परस्परपूरक हैं। चेतना जिवंतता की पहचान है, उसमें एक प्रकार की ऊर्जा होती है, स्फूलिंग होते हैं। वह स्वयं के अस्तित्त्व का बोध कराकर अन्याय-अत्याचार के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा देती है। यह पुरूषों ने भलिभांति जाना था। अत: उसने स्त्री की संवेदना एवं चेतना को कभी अपने बलबुतेपर, कभी नियमों के आधारपर तो कभी....

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैस्तु न पूजन्ते सर्वास्तत्रा फलः क्रिया।"

ऐसी झूठी प्रशंसा कर दबाये रखने का प्रयास किया। वह हमेशा स्त्री को निम्न स्तरपर रखकर अपनी सामाजिक स्थिति को सर्वोच्च रखने का प्रयत्न करता रहा है। आज भी उसके भीतर परम्परागत सोच ही काम कर रही है कि स्त्री उसकी भोग की निजी सम्पत्ति है। इसी का परिणाम है कि दहेज के अभाव में जलाना, बलात्कार, अत्याचार की घटनाएँ समाज में दिखाई देती है। लेकिन आज आधुनिक युग की शिक्षा पध्दति, कानून, सामाजिक आंदोलन और साहित्यिक अभिव्यक्ति ने स्त्री अस्मिता का नया अध्याय आरंभ किया है। वह समानता और अधिकारों की चेतना से सामने आने लगी है।

आज स्त्रीवादी विमर्श ने स्त्री-मुक्ति के प्रश्नों को विविध कोणों से उठाया है, जिसमें दैहिक प्रश्नों से संबंधित स्त्री-विमर्श को बढ़ावा मिला। पहली बार स्त्रियाँ देह और नैतिकता से जुड़े सवालों पर खुलकर सामने आने लगी क्योंकि उनका सर्वाधिक उत्पीड़न देह के स्तर पर ही हो रहा है। स्त्री देह को भोगने एवं अपनी अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए पुरूष मानसिकता ने हमेशा स्त्री को साँचों में, नियमों के बंधन में ढालने का प्रयत्न किया। उसके लिए तो वही स्त्री उपयुक्त है, जो पितृक साँचों एवं नीति नियमों में बंधी रहे। इसीलिए "लड़की बनकर रहो, साड़ी पहनों, पराये पुरूषों की ओर मत देखो, कढ़ाई करो, झाड़ू पोछा करो, बच्चों का पालन करों, पत्नी बनकर रहना सीखो, किसी भी बात का विरोध मत करो और सबके लिए उपयुक्त बनकर रहो।" इस पुरूष मानसिकता को अब स्त्री ने पहचाना है।

स्त्री अब पुरूष समाज में यह प्रश्न उठाने लगी है कि देह की पवित्रता, शील, नैतिकता आदि स्त्री के लिए क्यों जरूरी है? पुरूषों के लिए क्यों नहीं? अब वह परिवर्तित हो रही है। आज तक की जो स्त्री है,"वह बनी नहीं थी, उसे बनाया गया था अब वह स्वयं बनना चाहती है।" और स्वयं को बनाने का कार्य वह अपनी चेतना के आधारपर, अपने आन्दोलनों से तथा अभिव्यक्ति से कर रही है। इसीका ही परिणाम है कि हिन्दी साहित्य में भी असकी चेतना का स्वर मुखरित होने लगा है। यह कई लेखिकाओं के लेखन से स्पष्ट हो जाता है।

कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में नारी चेतना : संवेदना एवं स्वरूप :-

हिन्दी साहित्य के इतिहास में साठोत्तरी महिला कथाकारों में चर्चित कथाकार कृष्णा अग्निहोत्री की अधुनातन २००० के बाद लिखी कहानियों में नारी चेतना को यहाँ देखा जा रहा है। लेखिका ने जो कुछ समाज में देखा, भोगा तथा अनुभव किया उसको अपनी कहानियों में विविध नारी पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। जिसमें उसके नारी पात्र कहीं संस्कारों में बंधे दिखाई देते हैं, कहीं अन्याय को चुपचाप सहते हैं, कहीं परिस्थितियों से समझौता करते हैं, तो कहीं अन्याय का डटकर सामना भी करते हैं। जैसे -

'बिटिया' कहानी की नारी पात्र रागिनी न संस्कारों से प्रभावित है, न अपनी माँ के प्रति संवेदनशील है। उसकी संवेदनशीलता तो अपनी वासनापूर्ति की लालसा में दब गयी है। बचपन में माता-पिता ने लाड़-प्यार से पाला, किसी भी प्रकार की कमी महसूस होने नहीं दी। लेकिन पिता की मृत्यु के बाद रागिनी ने माँ की सलाह लिए बिना ललित के साथ शादी की। इतना ही नहीं अपने पति के साथ माँ के ही घर रहने लगी, माँ का आधार बनकर नहीं बल्कि शानो-शौकत की जिन्दगी जिने के लिए। माँ के बीमार पड़ने पर न उसका ध्यान अपनी माँ की तरफ था न पति ललित का। पिता के मित्र द्वारा यह कहने पर कि,"तुम क्या भाभी के पास नहीं जाती, वे तो बहुत बीमार हैं, खून ही नहीं बन रहा... उन्हें शीघ्र अस्पताल में रखना पड़ेगा। होमोग्लोबिन एकदम गिरता ही जा रहा है। ... क्यों तुम्हारे पति यहाँ तो रहते तो बेटे जैसे हैं, तो क्या कर्तव्य बेटों से नही करेंगे?"[१] रागिनी के मन में यह सुनकर माँ के प्रति संवेदना तो जगती है, लेकिन वासना की लालसा में तुरंत दब जाती है। वह माँ को दवा दारू करने की जब बात करती है ललित कहता है,"तुम तो सचमुच बच्ची ही रही, मम्मी-मम्मी की रट ही लगाती हो। अरे बुढ़िया यदि मर ही रही है तो मर जाने दो। ईश्वर हमारी मदद कर रहा है सुख से ठाठ करेंगे। और नहीं मरती तो सीढ़ियों से ढकेल देना।"[२] यह सुनकर रागिनी आवाक सी रह जाती है लेकिन कुछ कह नहीं पाती। क्योंकि शारदा की वह प्यारी बिटिया (रागिनी) मातृत्त्व से अलग वासना के दासत्व में उलझकर अन्य सच्चाई व अपनेपन की भावना को भूल गई थी।

शाम होते ही शारदा लॉनपर जाने के लिए जब सीढ़ियाँ उतरने लगी तो सामने से ललित ने बीमार शारदा के पैरोंपर धक्का मार दिया जिससे शारदा सीढ़ियों से गीर गई और बिटिया-बिटिया चीखते दम तोड़ दिया। यहाँ सवाल यह उठता है कि रागिनी की अपने माँ के प्रति संवेदना कहाँ गई और उसने अपने पति ललित को समझने में इतनी लापरवाही क्यों की और समझ ाने के बाद भी उसकी चेतना को किसने दबाया। इसका उत्तर है वासना की दासता, इसी वासना के दासत्व के घेरे में वह पूरी तरह से फंस गई थी।

'बुरी औरत' कहानी की वृंदासिंह तो बड़ी अजीबसी नारी पात्र है। वह पढ़ी-लिखी होकर भी अन्याय के खिलाफ लड़ने की उसमें हिम्मत नही हैं। परिणाम स्वरूप वह कुछ बनने के चक्कर में सती होकर भी बुरी औरत बन जाती है। बचपन में जिसे वह प्यार करती थी वह जाति का न होने से पिता के कहनेपर उसने अपनी ही जाति के मुनीष नामक लड़के से शादी कर ली।

शादी के बाद बच्चा न होने से मुनीष नाराज रहने लगा। घर में आरोप-प्रत्यारोप होने लगे। बात-बात पर वह झुंझलाता, कोसता और वृंदा को प्रताड़ित करने लगता। वृंदा को अब लगने लगा कि वह एक निकम्मी स्त्री है, उसे तो आत्महत्या कर लेनी चाहिए लेकिन अपनी अध्यापिका के आए फोन से उसमें हिम्मत सी आ जाती है और वह अपने पति से कहती है,"मुझे तुम अपनी जागीरी समझकर तोड़-फोड़ नहीं सकते। खुले सांड से तुम्हें मेरा जीवन घायल कर खंडित नहीं करने दूँगी।"[३] यह सुनकर मुनीष उसे और भी अधिक तकलीफ देने लगता है। उसने मुनीष के साथ समझौता करने का प्रयास भी किया लेकिन दूसरी स्त्री के प्रेम में फसकर मुनीष ने वृंदा को तलाक दिया। यहाँ अध्यापिका के फोन ने वृंदा में अन्याय के खिलाफ लड़ने का साहस उत्पन्न किया और उसने अपने पति का विरोध भी किया अन्यथा वह हमेशा के लिए अपने पति के अन्याय को सहने के लिए विवश हो जाती। कभी-कभी दूसरों की प्रेरणा भी नारी में अन्याय के खिलाफ लड़ने की क्षमता को जगाती है।

'एक और मीरा' कहानी की माँ केशरबाई और उसकी बेटी राधा दोनों के विचारों में अंतर दिखाई देता है। एक ओर केशरबाई पारम्पारिक विचारों को लेकर चलती है, जो अपने पतिद्वारा शराब पीकर रोज पीटने के बावजूद भी उपवास रखते हुए अपने पति की जिन्दगी के लिए प्रार्थना करती है, तो दूसरी ओर उसकी ही बेटी पढ़ी-लिखी है, जो अन्याय का विरोध करना जानती है।

केशरबाई का पति खूबचंद दस हजार रूपये लेकर अपनी बेटी राधा की श्रवन से शादी तय करता है, तो राधा का यह कहना कि,"मैं नही शादी करूँगी। तुम मुझे बेच रहे हो।"[४] उसके सही और गलत की परख को व्यक्त करता है। लेकिन पुरूष मानसिकता उसके विचार को कैसे स्वीकार कर सकती है। पिता को बेटी राधा की बात आखरती है और डाँटते हुए वह कहता है,"तो क्या मास्टरनी बनेगी? देख, तेरे नखरे सह रहा हूँ पर तू उड़े मत। झोपड़े में हमारे पैदा हुई है तो हमारे इशारे पर चलना पड़ेगा। महलों के सपने देखना छोड़ दे।"[५] यहाँ एक पिता होकर अपनी बेटी के बारे में ऐसा कह सकता है, तो अन्य पुरूषों के दूसरों की बेटी या नारी को लेकर क्या विचार हो सकते हैं इसका अंदाज हमें आ ही जाता है।

पिता के दबाव में आकर राधा श्रवण से शादी तो करती है लेकिन तीन साल के बाद भी जब राधा को संतान नहीं होती तो ससुरालवाले उसकी ओर शत्रु की दृष्टि से देखने लगते हैं। सास तो चीखते हुए कहती है,"अरे दस हजार दिए हैं क्या बाँझ के लिए दिए हैं? छोरे की मैं तो छोड़-छुट्टी करवा दूसरा ब्याह रचा लूँगी।"[६] यह कैसी विडम्बना है जहाँ संतान न होने से समाज हमेशा नारी को ही जिम्मेदार मानता है, पुरुष को नहीं। सवाल यह भी उठता है कि एक नारी की दूसरी नारी को लेकर संवेदना कहाँ लुप्त हो गई? इसीलिए तो समाज में 'नारी ही नारी की दुश्मन' यह कहावत रूढ़ हो गई है।

यहाँ श्रवण ने दूसरी शादी से तो इनकार कर दिया लेकिन अपनी पुरूष परम्परा का निर्वाह करते हुए दारू पीकर एक अपने से उम्र में बड़ी बेवा से संबंध बना लिए। पति के ऐसे पराये स्त्री के साथ नाजायज संबंध भला कौनसी पत्नी सह सकती है। और सहना भी नहीं चाहिए लेकिन राधा ने सहनशीलता दिखाई। एक रात श्रवण जब राधा से छेड़-छाड़ करने लगता है, तो राधा की अस्मिता जाग उठती है और वह पति को धक्का देकर दूर करते हुए कहती है,"दूसरी औरत को छूकर अब मुझे हाथ न लगाना"[७] यह सुनते ही श्रवण ने क्रोध से डंडा उठाया, तो राधाने भी हिम्मत और निडरता से उसके हाथ का डंडा छिनकर कहा,"देखो, मैं यह अन्याय नहीं सहूँगी। मुझे नहीं ऐसी औलाद चाहिए, जो गलत रिवाजों की गुलाम हो।"[८] यहाँ उसकी चेतना एक दृष्टि से स्वार्थी पुरूषप्रधान समाज पर प्रहार करती है। वह अपने पति जैसे क्रूर, अत्याचारी बेटे को जन्म ही नही देना चाहती।

राधा और श्रवण की आपाधापी में श्रवण का सिर दीवार को टकराने से खून निकलता है और घर में बवाल सा मच जाता है। पंचायत बुलाई जाती है। पंच न्याय क्या देंगे उन्होंने तो श्रवण का पक्ष लेते हुए फैसला सुनाया कि औरत जात को मर्द पर हाथ नहीं उठाना चाहिए अत: राधा सबके सामने श्रवण से माफी माँगे। यह कैसा न्याय है, गलती कोई और करे और सजा कोई और भोगे। लेकिन राधा ने अन्याय के सामने झुकना नहीं चाहा। उसका पंचों को यह उत्तर देना कि,"माँग लूंगी माफी पर श्रवण को भी वचन देना पड़ेगा सबके सामने कि वो पीएगा नहीं, मुझपर हाथ नहीं उठाएगा और दूसरी औरतों के पास नही जाएगा।"[९] ससुरालवालों ने जब यह बात नही मानी तो राधाने में स्वयं कमाकर जीवन जी लूँगी कहकर ससुराल ही त्याग दिया। संगीत शिक्षिका की सहायता से राधा ने स्वयं की भजन मंडली बना ली और भजन गाकर प्रशंसा एवं धन बटोरने लगी। कुछ दिनों के बाद श्रवण जब उसे लेने आता है, तो राधा का उसे यह कहना कि,"जब मन चाहेगा फिर धकेल दोगे। नहीं, मैं नहीं लौटूंगी। अब तो यूँ ही हरिगुण गा शेष जीवन जी लूँगी"[१०] उसके स्वावलंबन एवं आत्मनिर्भरता को व्यक्त करता है।

'धुआं' कहानी में बेटी रूपा में अपने पिता के प्रति अपनेपन की भावना है, तो बहू अनीता का अपने ससूरके प्रति संवेदनशून्य व्यवहार है। मौजीलाल एक अच्छे वकील थे, जिन्हें तीन बेटे और तीन बेटियाँ थी। बड़ा बेटा अविवाहित मर गया, मँजला देहली चला गया और छोटा रमेश था जिनके पास मौजीलाल रहते थे। तीनों बेटियों का ब्याह हुआ था।

मौजीलाल के प्रति न उसके बेटे रमेश का बर्ताव ठीक था न बहू अनीता का। एक बार अनीता बहू की मनमानी से झ ाल्लाई माँ ने बहू को गाली क्या दी कि रमेश ने अपनी पत्नी का पक्ष लेते हुए माँ का हाथ पकड़कर उसे गोल-गोल घुमाया और उसी वक्त घर से निकल जाने के लिए कहा था। इतना ही नही माँ के पश्चात पिता को उनके ही बनाए घर में अलग दुसरे मंजील में रखा और स्वयं अपनी पत्नी के साथ नीचे के कमरों में रहने लगा। यहाँ उसका स्वार्थ मात्र दिखाई देता है।

जिन बेटे-बहू, पोते-पोतियों के बीच रहने का मौजीलाल को मोह था, वें आज उनके कमरे में झाँककर यही भी नहीं देखते कि कमरा साफसूतरा है या गन्दा, हाँ जब नौकर आता तो ही कमरा, बिस्तर, कपड़े ठीक हो जाते अन्यथा उन्हें बेटी रूपा ही ठीक करती थी। केवल अपनी बेटी रूपा से ही उन्हें स्नेह मिलता था। बेटी का पिता को खीर खिलाना और यह कहना

कि,"बाबूजी आप नीचे से ऊपर क्यों चले आए? अब तुम्हारे घुटने तो कितने कमजोर हो गए हैं, बार-बार उतरना-चढ़ना तो संभव नहीं।"[११] पिता के प्रति उसकी सहानुभूति को व्यक्त करता है। इतना ही नहीं उसका यह कहना कि,"मैं तो गरीब हूँ-कुछ अच्छी सलाह भी दूँगी तो शक की सुई मेरी ही ओर उठेगी। तब भी कहना मेरा धर्म है कि मोती सूअरों के आगे मत डालो बाबूजी। इतना धन रमेश को पूरा नहीं पड़ रहा जो उसकी नीयत आपके धन पर है।"[१२] उसके अच्छे-बूरे की पहचान को व्यक्त करता है। इसी कहानी की दूसरी नारी पात्र अनीता मौजीलाल की बहू है। उसका अपने पिता समान ससूर को कोसते हुए यह कहना कि, "बूढ़ा मरता तक नहीं। पता नहीं कौनसी अमर बूटी खाकर आया है।"[१३] उसकी संवेदनशून्यता को व्यक्त करता है। आखिर में बाबूजी जलकर मर जाते हैं। रमेश तो यही कहता है कि बाबूजी ने अगरबत्ती जलाकर आत्महत्या कर ली है लेकिन रूपा का यह जानना कि,"बाबूजी आत्महत्या कर ही नही सकते थे और अगरबत्ती से कहीं आत्महत्या होती है।"[१४] यह उसकी बौध्दिकता के साथ-साथ अपने पिता के प्रति अपनी वेदना को भी व्यक्त करता है।

निष्कर्ष :-

इस प्रकार चेतना मनुष्य के जीवंत रहने का लक्षन है और संवेदना से वह दूसरों के सुख-दुख की अनुभूति करता है। इसीलिए मनुष्य को संवेदनशील प्राणी कहा जाता है, चाहे वह पुरूष हो या स्त्री। पुरूषप्रधान समाज में पुरूषों ने हमेशा नारी की संवेदना तथा चेतना को कभी उसकी झूठी सराहना करके तो कभी अपनी शक्ति एवं बंधनों में दबाया है। आजादी के बाद शिक्षा, कानून आदि ने समानता का अधिकार देकर नारी के लिए विकास के क्षेत्र खुले कर दिए और नारी अब अबला नही सबला बनकर पुरूषों के बराबर हर क्षेत्र में प्रवेश कर रही है। हिन्दी साहित्य में भी लेखिकाओं का प्रवेश उसी का एक उदाहरण है। साठोत्तरी काल की लेखिकाओं में से कृष्णा अग्निहोत्री एक लेखिका है, जिसकी कहानियों में नारी चेतना एवं संवेदनाओं का अलग-अलग रूप हमें दिखाई देता है। कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में नारी चेतना तथा संवेदना के स्वरूप को देखने के पश्चात कुछ निष्कर्ष बिंदू हमारे सामने आते हैं। जैसे -

- कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों के कुछ नारी पात्रों की संवेदना उसकी वासनापूर्ति की लालसा में दबी हुई दिखाई देती है। जैसे 'बिटिया' कहानी की रागिनी।
- कुछ नारी पात्र पढ़ी-लिखि होने के बावजूद भी अन्याय के खिलाफ लड़ने की हिम्मत नहीं करती।
- कभी-कभी दूसरों की प्रेरणा से भी नारी में अन्याय के विरूध्द लड़ने की क्षमता को जगाया जा सकता है।
- कुछ कहानियों के नारी पात्र पारम्पारिक विचारों को लेकर चलती है, तो कुछ आधुनिकता को लेकर।
- एक ओर केशरबाई जैसी नारी अपने पतिद्वारा पीटने के बावजूद भी उपवास के जरिए अपने पति की जिन्दगी के लिए प्रार्थना करती है, तो दूसरी ओर उसकी ही बेटी पढ़ी-लिखि होने से अन्याय का विरोध करती है।
- कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों के कुछ नारी पात्र आत्मनिर्भर बनकर जीना चाहते हैं।
- कुछ नारी पात्र संवेदनशून्य भी हैं, जो पितासमान ससूर को पल-पल प्रताड़ित करती रहती है।

कुलमिलाकर कृष्णा अग्निहोत्री ने अपनी कहानियों में विविध प्रकार के नारी पात्रों का चित्रण किया है। जिसमें कुछ संवेदनशील है, तो कुछ संवेदनशून्य। कुछ पात्र दूसरों के सुख-दुखों का अनुभव करते हैं और आवश्यकतानुरूप उसकी सहायता भी करते हैं, तो कुछ नारियाँ संवेदनशून्य बर्ताव से पाठकों के लिए उपेक्षा की पात्र बनी हुई हैं।

संदर्भ सूची :-

१. कृष्णा अग्निहोत्री - बिटिया (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - पृ.सं.२००१, साहित्य भारती प्रकाशन, नई दिल्ली- पृ.८४.
२. कृष्णा अग्निहोत्री - बिटिया (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - साहित्य भारती प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ.८४
३. कृष्णा अग्निहोत्री - बुरी औरत (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ.१३.
४. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७३.

५. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७३.
६. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७३.
७. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७४.
८. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७४.
९. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली. - पृ. ७४.
१०. कृष्णा अग्निहोत्री - एक और मीरा (जीना मरना) - पृ.सं.२०११, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली - पृ. ७५.
११. कृष्णा अग्निहोत्री - 'धुआं' (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - पृ.सं.२००१, साहित्य भारती प्रकाशन नई, दिल्ली - पृ.२२.
१२. कृष्णा अग्निहोत्री - 'धुआं' (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - पृ.सं.२००१, साहित्य भारती प्रकाशन नई, दिल्ली - पृ.२१.
१३. कृष्णा अग्निहोत्री - 'धुआं' (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - पृ.सं.२००१, साहित्य भारती प्रकाशन नई, दिल्ली - पृ.२२.
१४. कृष्णा अग्निहोत्री - 'धुआं' (अपने अपने कुरूक्षेत्र) - पृ.सं.२००१, साहित्य भारती प्रकाशन नई, दिल्ली - पृ.२४.

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com